हिन्दी ग़ज़ल की नयी चेतना

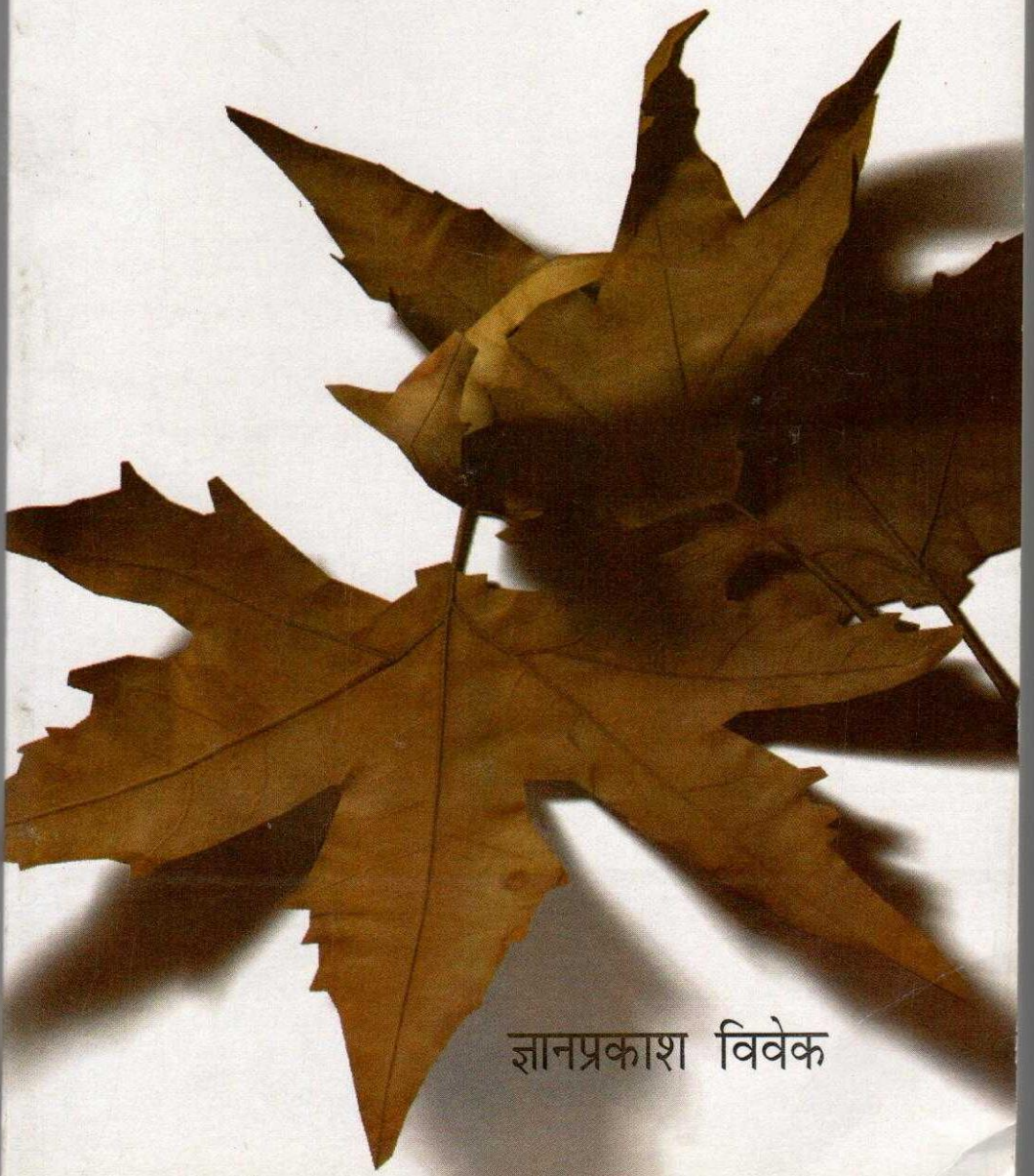

ज्ञानप्रकाश विवेक

समकाल से वाबस्तगी

हिन्दी में लिखी जा रही ग़ज़लों में अनेक धाराएं हैं जो इस विधा के संवर्धन का काम ज़िम्मेदारी के साथ कर रही हैं।

लेकिन जो सबसे अहम और महत्त्वपूर्ण धारा जिसमें युवा और वरिष्ठ ग़ज़लकार अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। यहां समकालीन यथार्थ के अतिरिक्त, मन का अन्तर्द्वंद्व, संबंधों का विखण्डन, अकेले होते जाने की वेदना के अतिरिक्त मनुष्यता को बचाए रखने के प्रयास—नई सोच, नए संज्ञान और नई भाषा-शैली में व्यक्त होते हैं।

युवा ग़ज़लकार पवन कुमार अपनी ग़ज़लों से नए समय को व्यक्त करते हुए, उस मुहावरे का भी सृजन करते हैं जो हिन्दी का है और उर्दू का भी है। ग़ज़ल के भीतर वो ज़रूरी अनुशासन और मर्यादा का निर्वाह करते हुए, उस लय का सृजन भी करते हैं जो उनकी शब्दावली से छनकर आती है। भाषा के प्रति उनकी संचेतना, उनके अश्आर को मानीखेज़ तो बनाती ही है, दरियाओं जैसी रवानी भी पैदा करती है। कुछ शेर—

बस इस धुन में गहरा हो तअल्लुक़
हमारे फ़ासले गहरे हुए हैं

क़ुर्बत के इन पलों में यही सोचता हूं मैं
कुछ अनकहा है उसके—मिरे दर्मियान अब

क़बीलों की रिवायत, बंदिशें तफ़रीक़ नस्लों की
मुहब्बत इन झमेलों में पड़े तो हार जाती है

उपर्युक्त तीन अश्आर ग़ौरतलब हैं। शेर के भीतर जो आंतरिकता होती है और उसकी ध्वनियां बाहर शब्दावली में भी गूंजती रहती हैं, उसकी उपस्थिति यहां है। इसी आंतरिकता से अश्आर की कई तहें बनती चली गई हैं। अश्आर में बयान की सादगी है लेकिन शेर इकहरे नहीं। शेर सादा हैं लेकिन आसान नहीं।

पहले शेर में अन्तर्विरोध की अभिव्यक्ति है जो नए समय के संबंधों की जटिलताओं से पैदा हुई है। यहां एक कशमक़श-सी भी है। दूसरा शेर भी संबंधों की अभिव्यक्ति है। दो पात्रों (स्त्री-पुरुष अथवा प्रेमी-प्रेमिका) के बीच बहुत कुछ व्यक्त होने के बावजूद, 'अकथ' रह जाता है। और इस शेर में मैं पात्र (कुर्बत के क्षणों में) इसी अकथ के विषय में सोच रहा है। यह 'सोच' शेर के परिसर में किसी व्याकुलता-सी थरथराती रहती है। तीसरे शेर में भी संबंध है। लेकिन यह शेर अपने मिज़ाज में भिन्न, ज़मानासाज़ दुनिया की यांत्रिकता पर तन्ज़ की तरह है।

पवन कुमार की शेरगोई में एक सलीका है। अंदाज़े बयां में एक ठहराव है। विनम्रता, पवन की ग़ज़लों का विशिष्ट गुण है। न बड़बोलापन न मुंहफट लहजा। बात संकेतों में और बात स्पष्ट भी लेकिन एक झीना-सा परदा–

कुछ शेर–

तेरे हर नक़्श को दिल से जिया है
तुझे ऐ ज़िन्दगी ढोया नहीं है

अब देखना है किसको मिलती है कामयाबी
जलते हुए दिये से उलझी हुई हवा है।

इसे तो जीतना था नफ़रतों को
मुहब्बत हाथ कैसे मल रही है।

पवन के शेर कहने की यह हुनरमंदी आश्वस्त करती है। तीनों अश्आर में एक बात 'कॉमन' है वो है अपने विचार की मुक़म्मल पैरवी और उसे शेर में आख़िर तक (काफ़िये तक) छुपाए रखना।

पहले शेर में वो ज़िन्दगी से मुख़ातिब हैं। लेकिन ज़िन्दगी से उनका संबोधन दूसरे मिसरे में होता है। पहला मिसरा रहस्य बुनता है। दूसरे मिसरे में वो रहस्य खुलता है। और साधारण बात, असाधारण रूप अख़्तियार कर लेती

है। दूसरा शेर भी इसी लबो-लहजे में व्यक्त होता है। पवन कुमार जब कहते हैं—जलते हुए दिये से उलझी हुई हवा है—तो ज़ाहिर है शिकस्त दिये की होनी है। लेकिन यहां जो 'संभावना' है—किसको मिलती है कामयाबी—यही संभावना इस शेर की आत्मा है। संभावना का बचे रहना ज़िन्दगी की लय का बचे रहना भी है। लेकिन तीसरे शेर में वो संभावना टूटती है और उस टूटने की उदास आवाज़ें शेर में सुनाई देती हैं—मुहब्बत हाथ कैसे मल रही है? नफरतों के सामने मुहब्बत की पराजय! यह पराजयबोध समाज की क्रूर विडम्बनाओं, खाप फ़रमानों और जटिल हदबंदियों से छनकर आया है।

पवन कुमार अश्आर को गहराई से व्यक्त करते हैं— भाव की गहराई—यथार्थ और कल्पना का सान्निध्य! पवन की ग़ज़लों में विचार यूं ही नहीं व्यक्त होते, वो समाज के मुश्किल रास्तों से होकर आते हैं। एक बड़ी बात यह भी है कि पवन कुमार की ग़ज़लों में आवाज़ सिर्फ़ शब्दों की ही नहीं, ख़ामोशी की भी आवाज़ है, जो शब्दों की आवाज़ में तहलील होकर गूंजती है। यथा—

मुझे भी ख़्वाब होना था उसीका
मेरी क़िस्मत कि वो सोया नहीं है

शेर में कवि की बेचैनी ख़ामोशी की आहटें हैं जिन्हें सुना जा सकता है।

एक और शेर—

लहरों को भेजता है तकाज़े के वास्ते
साहिल है कर्ज़दार समन्दर मुनीम है

ये प्रतीक बिलकुल नए हैं। यहां समन्दर की नई छवि है—चकित करती हुई। यहां समन्दर 'मुनीम' है। वो लहरों को लहरों की तरह नहीं, 'तकाज़े' की तरह रवाना करता है। पूरा शेर बिम्ब की रचना करता है। पवन कुमार बेशक उर्दू ग़ज़ल से काफ़ी प्रभावित हैं। इसके बावजूद, उन्होंने अपनी ग़ज़लों में अपने नए और मौलिक मुहावरे का भी सृजन किया है। समन्दर का मुनीम हो जाना तथा लहरों को तकाज़े के वास्ते भेजना, यह न उर्दू ग़ज़ल का मुहावरा है न हिन्दी ग़ज़ल का। यह मुहावरा हिन्दी ग़ज़ल की युवा रचनाशीलता का है। शेर है—

सबकी दुनिया है अलग सबको बिछुड़ना है मगर
फूल को शाख से रिश्ते तो निभाने होंगे

यह शेर संबंधों पर है। लेकिन नश्वरता का चिंतन तत्त्व इस शेर को गहराई प्रदान करता है। यहां नश्वरता के साथ संभावना जैसा तत्त्व भी जुड़ गया

है कि नश्वरता के बावजूद, प्रेम की भावना शाश्वत है। वो भावना जीवित रहती है। साधारण रूप से दिखाई देनेवाले इस शेर की शक्ति इसकी सादगीभरी संरचना में है। चिंतन की अपनी जगह है। लेकिन वो सादगी पर हावी नहीं होता।

पवन कुमार के ग़ज़ल-संग्रह का नाम—वाबस्ता है। उनकी वाबस्तगी जीवन से, समाज से, लोगों से, समय से तथा सबसे बढ़कर मनुष्यता से है। वही मानवतावादी सोच उनकी ग़ज़लों के केंद्र में है। उसे वो हर सूरत बचाये रखना चाहते हैं। यथार्थ को देखने और परखने में भी वही मानवतावाद अपने प्रखर रूप में उपस्थित रहता है। कुछ शेर इसी सिलसिले में—

जब जब हुआ फ़साद तो हर एक पारसा
साबित हुआ कि चाल-चलन से यतीम है

यही इक आख़री सच है जो हर रिश्ते पे चस्पां है
ज़रूरत के समय अक्सर भरोसे टूट जाते हैं

महज़ हाक़िमों की दुनिया ही उनकी ख़ातिर ख़बरें हैं
मज़लूमों के हक़ में लिखनेवाला अब अखबार नहीं

बहुत बेख़ौफ होकर फूल जो सहरा में उगता था
बदलते वक़्त में वो भी खुदा से बाग़बां चाहे

वही मसरूफ़ दिन बेक़ैफ़ लम्हें
इसी का नाम शायद नौकरी है

रहें महरूम रोटी-से उगाएं उम्रभर फस्लें
मज़ाक ऐसा भी होता है किसानों के पसीनों से

पवन कुमार की ग़ज़लों के अश्आर अपनी जगह बनाते हैं और अपने होने का मक़सद पैदा करते हैं। उपर्युक्त अश्आर इस बात की तसदीक करते हैं। यहां यथार्थ को जस का तस नहीं व्यक्त किया गया। यहां हर छोटे-बड़े अनुभव की पुनर्रचना है। हर शेर में अपने समकाल की ख़राशज़दा तहरीरें हैं। चाल-चलन में पारसा का यतीम होना बिलकुल नई अभिव्यक्ति है। तो एक अन्य शेर में दूसरा मिसरा इतना परिपक्वता से व्यक्त हुआ है कि वो शेर का मिसरा है और

वो गद्य भी है। यदि इस पंक्ति को गद्य में लिखा जाए तो ऐसे ही लिखा जाएगा। इस तरह की संरचना अपने प्रखर रूप में विद्यमान है। वरना हिन्दी ग़ज़लों में गद्यात्मकता लय और नाद को नष्ट कर देती है। लेकिन यहां ऐसा नहीं होता। नए समय पर तबसरा करने का यह भी एक अंदाज़ है कि फूल को प्रतीक बनाया जाए। वो सहरा से इतना डरा हुआ कि सुरक्षा के लिए बाग़बां की इच्छा रखता हो । वरना फूल इतने बेखतर होते हैं कि कहीं भी उगने लगते हैं। लेकिन अब फूल (अभिव्यक्ति) ही ख़तरे में है। किसानों के प्रति वेदना आख़िरी शेर में किसी तन्ज़ की तरह है।

यथार्थ इकहरा नहीं। वो आसान रास्तों से होकर नहीं आता। उसे देखने-परखने का परिपक्व बोध है। वो किसी जटिल विषय की तलाश में भटकते नहीं। साधारण विषय को असाधारण रूप से व्यक्त करने का कौशल रचते हैं–

मुझे ये ज़िन्दगी अपनी तरफ़ कुछ यूं बुलाती है
किसी मेले में कुल्फ़ी जैसे बच्चे को लुभाती है।

यहां स्मृति अपने आख्यान रूप में है। सिर्फ़ एक शब्द कुल्फ़ी के प्रयोग से शेर की दुनिया बदल गई। कुल्फ़ी शब्द कुल्फ़ी नहीं रहता। वो बहुत बड़े प्रतीक में बदल जाता है। बचपन की सारी मासूमियत कुल्फ़ी में है। कुल्फ़ी का जो आकर्षण है वही आकर्षण कवि के लिए ज़िन्दगी का भी है। अगर पवन कुमार मेले में आइसक्रीम का प्रयोग करते तो शेर में वो इंटेंसिटी न आ पाती।

शेर को व्यक्त करने के अंदाज़ से ग़ज़लकार की पहचान बनती है और वो यहां है– मेले, कुल्फ़ी, समन्दर, मुनीम, लहरों के तकाज़े, ख़ुदसरी पे उतरा कच्चा मकान, रात की चौखट पे मुंतशिर आंखें, दिल की चौसर, पानियों का जुलूस आदि ऐसे नायाब प्रयोग हैं जो पवन कुमार की ग़ज़लों को जदीदियत और प्रयोगधर्मिता से सम्पन्न और समृद्ध करते हैं। कई जगह उनकी ग़ज़लों की ज़मीन पर उर्दू शायरों का प्रभाव भी हावी हुआ है। इसके बावजूद, पवन कुमार की ग़ज़लें अपने समाज और समय की विडम्बनाओं तथा अन्तर्विरोधों और कशमकश को बड़ी शाइस्तगी से व्यक्त करती हैं। सादगी इन ग़ज़लों का वैभव है। नया भावबोध इन ग़ज़लों की शिनाख़्त है।